Artistic Narration, Vol. VIII, 2017: ISSN (P) : 0976-7444 (e) : 2395-7247*Impact Factor 3.9651 (ICRJIFR)*
UGC Approved Journal No. 43285

''साँझी''

डॉ0 दिलीप कुमार गुप्ता
सहा॰ आचार्य, ललित कला विभाग, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, हरियाणा

शोधपत्र का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:

डॉ0 दिलीप कुमार गुप्ता,
'' साँझी'',
Artistic Narration 2017, Vol. VIII, No.1, pp. 51-59
http://anubooks.com/?page_id=2325

सारांश

*समस्त प्राणियों का स्वभाव है कि स्वाभाविक यथार्थ से भिन्न होने, दिखने या करने का उपक्रम करे। पर क्या कल्पना की भी कोई सीमा होती है? कला सत्य, शिव व सुन्दर की आत्मा है। कला के बारे में कहा जाता है – **'कलयति मनासिः सा कला'** अर्थात जो मन को सुन्दर लगे, आर्कषक लगे वही सुन्दर है। लोककला में भित्तिचित्रों का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जैसा कि एक बार आचार्य 'यामिनी राय' ने कहा था, **''कोई भी कलाकार भीत (दिवाल) को सूनी नहीं देख सकता।''** आप किसी भी गाँव में चले जाइये, वहाँ के साधारण से मकानों की दीवारों को भी आड़ी–टेढ़ी रेखाओं से अंकित भित्तिचित्रों से चित्रित पायेंगें।*

'संजा' आधुनिक कला की एक विधा 'कोलाज' का प्रेरणास्त्रोत है। साँझी परम्परागत् लोकचित्र शैली का रंगारंग कलारूप है। वे समग्र रूप से तो भित्तिचित्र होकर भी भित्ति प्रतिमाएँ हैं और भित्ति प्रतिमाएँ होकर भी भित्तिचित्र हैं। ये रूपाकार मध्यप्रदेश में साँझी कहलाते हैं। संजा की आराध ना का समय दिनान्त की संध्या है। क्वार माह के कृश्ण पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर अमावस्या पर्यन्त साँझाफूली का त्यौहार मनाया जाता है। ये किशोरियों का सबसे प्रिय त्यौहार है, साथ ही लोककला का 'श्रेष्ठ समायोजन'। लोक में इसे संजा, सज्या, हंज्या, साँझाफूली, संजाफूली, संजाबाई, संजियादेवी, साँजुली, साँझी, संझ्या या संध्यादि भिन्न–भिन्न नामों से पुकारने पर भी सब मिलाकर एक ही देवी की प्रायः एक जैसी अनुष्ठान विधि की ओर इंगित किया जाता है। गोबर की पट्टियों पर गुलतेबड़ी के फूल–पत्ते–पंखुरियाँ, रंगीन कागज के ज्यामितिक आकार, चमकीली पन्नियाँ लगाकर सजावट की जाती है, जो एकल होकर भी सामूहिक उत्सव है। यह परम्परा एक प्रकार का कला महोत्सव है।

इस प्रकार मध्यप्रदेश की लघुचित्रकला में साँझी चित्र अधिक सुघड़ और कलात्मक है। रंग का समुचित व उजला रूप, रेखाओं का तालमेल और आकृति का भावपूर्ण अंकन यथोचित् रहता है। चित्रों की विषयवस्तु की विभिन्नता दूर–दृष्टिता की झलक दिखलाती है, जो सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम् की त्रयी में समायोजित हो जाते है।

डॉ0 दिलीप कुमार गुप्ता

प्रस्तावना

लोक परम्परा में भूमिचित्र माँडना जिस प्रकार लोकप्रिय है, उसी प्रकार भित्ति पर भी गोबर की प्रतिमाएँ बनाकर उनकी पूजा की पद्धति मालवा में प्रचलित है। गोबर से भित्ति पर लीपकर उस पर लतकचे गोबर से विभिन्न आकृतियाँ बनाकर उन पर फूलों की पंखुड़ियाँ चिपकाकर उन आकृतियों को रंगबिरंगा बना दिया जाता है। भित्ति पर अँगूठें और तर्जनी से दबाकर–चिपकाकर गोबर की जो आकृतियाँ उभारी जाती हैं, वे समग्र रूप से तो भित्तिचित्र होकर भी भित्ति प्रतिमाएँ हैं और भित्ति प्रतिमाएँ होकर भी भित्तिचित्र हैं। ये रूपाकार साँझी कहलाते हैं। संजा की आराधना का समय दिनान्त की संध्या है।

मध्यप्रदेश में जिरोती, नाग व दशहरा तो रंगों से बनाये जाते हैं, पर साँझी ताजे, गोबर, फूलों की पंखुड़ियों एवं हरी–हरी पत्तियों से बनाई जाती है। क्वार माह के कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से प्रारम्भ होकर अमावस्या पर्यन्त साँझाफूली का त्यौहार मनाया जाता है। ये किशोरियों का सबसे प्रिय त्यौहार है, साथ ही लोककला का 'श्रेष्ठ समायोजन'। सावन के वातावरण में साँझाफूली का त्यौहार आता है। यह त्यौहार विशुद्ध रूप से बालिकाओं के लिये हैं।

बचपन से विवाह पूर्व तक क्वार मास के श्राद्ध पक्ष में सन्ध्या के समय कुमारी कन्याएँ अपने–अपने घर के सामने की भित्ति को गोबर से लीपती हैं। उस पर गोबर से ही चौकोर घेरा बनाया जाता है। नीचे की ओर उसमें जगह छोड़कर द्वार रखा जाता है। घेरे में गोबर से प्रतिदिन भिन्न–भिन्न आकृतियाँ बनायी जाती है। उस समय सरलता से आस–पास सुलभ गुलतेवड़ी के फूलों की पंखुड़ियों से उन्हें सजाया जाता है। उन पर वे पंखुड़ियाँ चिपका दी जाती हैं, तब वे दूर से मनोहर लगती है। फिर उस आकृति पर छींटे डालकर कुमकुम लगाकर पूजा की जाती है। इस पूरे अनुष्ठान की अवधि में संजा के गीत गाये जाते हैं। दूसरे दिन उन आकृति के गोबर को उखाड़कर नयी दूसरी आकृति वहीं बनायी जाती है। यह क्रम सोलह दिन तक चलता है। सोलह दिन–हर दिन नयी–नयी आकृति। सोलह दिन कन्या की आयु के सोलह बरस के प्रतीक–जब तक वह विवाह योग्य नहीं हो जाती। यानी यह उत्सव विवाहपूर्व से विवाह तक का है।

लड़कियाँ संजा स्थान पर पूर्व बनी आकृति को कुरेदकर हटातीं, फिर लीपतीं, फूल चुनने जातीं, गोबर लातीं, गोबर साफ कर मसलतीं, फिर आकृतियाँ बनातीं, तब पूजा–अनुष्ठान का क्रम आरम्भ किया जाता है। घर में उपलब्ध संसाधनों के उपयोग से मनोरंजन भी होता है। गोबर के साथ ही गुलतेवड़ी के फूल यदि उपलब्ध हो जाएँ तो उन गोबर की आकृतियों पर गुलाबी, हरे, नीले, पीले, लाल–चमकीले घुटमा कागज के टुकड़े भी चिपकायें जाते हैं, जिससे वे आकृतियाँ और अधिक आकर्षक दिखाई दें। पिछले पन्द्रह दिनों तक बनायी गयी समस्त आकृतियाँ पुनः एक साथ बनायी जाती हैं और उनके साथ अन्य भी आकृतियाँ बनायी जाती हैं।

हिन्दी खड़ी बोली में साँझी कहते हैं, परन्तु मालवी में वह संजा कहलाती है। विवाह के अवसर पर संजा को साँजा, साँजुलि, साँझी आदि नामों से भी पुकारते हैं। इसे ब्रज में साँझी कहते हैं। राजस्थानी में संझा, बुन्देलखण्ड में जामुलिया या मामुलिया (महाबुलिया),[1] ब्रज में सजलदे[2], गुजरात में गोयरा,[3]

महराष्ट्र में गुलाबाई तथा निमाड़ में साँझाफूली कहते हैं। इसके अतिरिक्त पंजाब, हरियाणा में इसे दुर्गा रूप में पूजते हैं, राजस्थान में गौरा या पार्वती रूप में पूजते हैं, ब्रज में राधा के रूप में पूजी जाती है। मालवा में संजा लोकदेवी है। विभिन्न अंचलों में संजा के विभिन्न रूप, गीत, कथाएँ है, परन्तु उसकी पूजा प्रायः पूरे उत्तर भारत में प्रचलित हैं। लोक में इसे संजा, सज्या, हंज्या, साँझाफूली, संजाफूली, संजाबाई[4], संजियादेवी[55]

कन्नौज व अवध आँ

चल में साँ

झी को पुकारा जाने वाला एक अन्य नाम है।

साँजुली, साँझी, संझ्या या संध्यादि भिन्न–भिन्न नामों से पुकारने पर भी सब मिलाकर एक ही देवी की प्रायः एक जैसी अनुष्ठान विधि की ओर इंगित किया जाता है।

मालवी नगरों में संजा कहते हैं, जो सज्जा या सजावट का पूर्वोक्त अर्थ है। परन्तु मालवा के ग्रामों में उसे 'हंजा' कहते हैं। 'हंजा' शब्द संस्कृत और प्राकृत में यथावत् विद्यमान हैं। सखी या दासी के आह्वान या सम्बोधन में हंजा और हंजे शब्द का विधान नाट्यशास्त्र में किया गया है। रत्नावली आदि में उसका प्रयोग भी मिलता है :–

हंजे कंचणमाले अहं हदसी कडुभासिणी।

नाथद्वारा में तथा उस परम्परा के मंदिरों में संजा माँडने की परम्परा का निर्वाह किया जाता है। कृश्ण की बालहठ पूर्ण करने के लिए यशोदा संजा माँडती थी। दक्षिणा लेते हुए इस समय ब्राह्मण जिन दो श्लोंकों का पाठ करते हैं, उनमें संजा या सन्ध्या की षिवप्रिया या पार्वती रूप में स्तुति की गयी है। उन श्लोकों से ज्ञात होता है कि संध्या शांति, सुख, वरदान देती है और वंश की वृद्धि करती है। यह माता हैं, मंगला (मंगलकारिणी) है। उससे पति प्राप्ति की याचना की जाती है।

सन्ध्या देवी नमस्तुभ्यं शांतीदात्री सुखप्रदा, वरदात्री षिवप्रिया वंषवृद्धिंकरा भव।।
सन्ध्या षिवप्रिया माता मंगला सर्वषांतिदा, पतिं प्रयच्छ मे देवी वरदात्री नमोस्तु ते।

साँझी के प्रकार :

गोबर के पाँच पांचा (बिंदियाँ) और ऊपर सूरज–चाँद उसी स्थान को लीपकर वहीं दूसरे दिन बीज को चन्द्रमा और पाटला या कोई खिलौना, तीज को छाबड़ी, चौथ को चतुष्कोण बीजारो या चौपड़, पंचम् को गोर वेसन्या, गोबर के अलंकार के घेवर तथा कुँवारा–कुँवारी, छठ के दिन चौपड़ और छाबड़ी, सत्तम् को सात्या स्वास्तिक और सात बिन्दियाँ सप्तर्षि की, अष्ठम् अष्टतीर्थ की पूजा होने से आठ पंखुड़ी का फूल, नगाड़े की जोड़ या हाथी तथा लक्ष्मी, नवमी को डोकरा–डोकरी, दसमी को पंखा या दस लहरिया, एकादषी या ग्यारस को केले का पेड़, बारस को घुघरा, तेरस को ऋद्धि–सिद्धि तथा खोड्या वामन या मुँह में पत्र लिए चिड़िया बनाते हैं। चौदस को खोड्या वामन बनाते हैं। फिर अमावस का किलाकोट बनाया जाता है। इस किलाकोट में वरयात्रा की छवि भी अंकित की जाती है। साथ ही बन्दनवार, गाड़ी घट्टी, छड़ी, जलेबी, जसोदा, पातली पेमा, सात या बारा भाई की फौज, नसेनी, कंघी,

बिछिया, चूड़ी, नथादि बनायी जाती है।

साँझी बनाने में गोबर, गुलाल गुलबाँसादि फूलों की पंखुड़ियाँ तथा नगर कन्याएँ चमकदार पन्नी व रंगीन चिकना कागज भी प्रयोग में लाने लगी है। साँझी के आकार का कोई निश्चित व नियत् माप नहीं हैं पर अधिकतर देखा गया है 3′ ग 3′ अथवा 4′ ग 4′ में ही बनाई जाती है। प्रारम्भ के दिनों में 1′ ग 1′ में ही बनती है क्योंकि आकृतियाँ अधिक नहीं होती थीं।[6]

अतः 'संजा' आधुनिक कला की एक विधा 'कोलाज' का प्रेरणास्त्रोत है। गाढ़े गोबर से साफ–सुथरे ढंग से लिपी भित्ति पर विभिन्न आकारों को चिपकाया जाता है, रिलीफ वर्क भी होता है। पूर्ण चित्र सीमा रेखाबद्ध होता है। गोबर की पट्टियों पर गुलतेबड़ी के फूल–पत्ते–पंखुरियाँ, रंगीन कागज के ज्यामितिक आकार, चमकीली पन्नियाँ लगाकर सजावट की जाती है, जो एकल होकर भी सामूहिक उत्सव है।

साँझी : "एक और अनोखे रूप में"

साँझी परम्परागत् लोकचित्र शैली का रंगारंग कलारूप है। साँझी की परम्परा बुन्देलखण्ड के केवल दतिया जिले में ही प्रचलित थी। साँझी ब्रज और राजस्थान में आज भी उलछारी जाती है। बुन्देलखण्ड का भू–भाग दतिया ब्रज क्षेत्र से सर्वाधिक प्रभावित रहा। दतिया के बुन्देला राजाओं ने धूमध ाम से ब्रज की यात्राएँ की और मथुरा–वृन्दावन की तर्ज पर दतिया में मंदिरों का निर्माण करवाया।[7] दतिया नगर में साँजी उलछारने की परम्परा है। यह परम्परा एक प्रकार का कला महोत्सव है।

दतिया में साँझी श्राद्ध पक्ष में अश्विन् कृष्ण (सितंबर) एकादशी से पाँच दिन तक जमीन पर एक चौकोर मिट्टी का आकार तैयार कर, उस पर सूखे रंगों से उलछारी जाती थी। इस महोत्सव से पूर्व, खसकीला पत्थर (बलुआ पत्थर) को महीन पीसकर कपड़े से छानकर, उसके द्वारा अनेक प्रकार के रंगचूर्ण तैयार किये जाते हैं फिर कोरे तथा मोटे कागज पर नाना प्रकार की रेखाकृतियाँ और बेलबूटे बनाकर उनके भीतरी भाग को तेज चाकू या ब्लैड–कैची से काटा जाता हैं, जिनको स्टेंसिल (क्षेपांकन) पुकारते हैं।

ऐतिहासिक ब्यौरों से ज्ञात होता है कि क्षेपांकन विधि का आविष्कार 2000 से 3000 ईसा पूर्व के बीच चीन और रोम में हुआ। स्टेंसिल के द्वारा ही दीवारों पर सजाने के लिए कागजों को बनाया जाता था। भारत में इस कला का आगमन कब हुआ–इसका कोई ठोस प्रमाण नही मिलता। सम्भव है कि मुस्लिम साम्राज्य से पूर्व चीन से आए यायावरों द्वारा, व्यापार–मार्ग के माध्यम से, यह भारत में आयी हो।[8] वैष्णवों के मंदिरों में झूले को सजाने के लिए कागज अथवा केले के पत्तों से बने स्टेंसिल का प्रयोग किया जाता था, जो रंगोली की तरह की ही एक कला लगती है।

परंतु दतिया में कागज के साँचे काट कर तैयार रखे जाते थे। झाँकियों की सजावट में रंग की पतली–पतली किनारे, बेलबुटों की किनारी बनाये जाने के लिए उपयोग में लाई जाती थी। बड़ी–बड़ी परातों में पानी भरकर उस पर सेलखडी की तह बनाकर, उस तह पर झाँकी तैयार की जाती थी। परातों की तह में तैलीय रंगों से झाँकी तैयार कर ऊपर से पानी भर दिया जाता था। वेदिका के चारों ओर की

दीवारों पर नाना प्रकार के चित्र टाँग दिये जाते हैं और झाँकियाँ सजायी जाती हैं। झाँकियों के ऊपर दो–दो किलो की जलेबी और भिन्न–भिन्न प्रकार के मेवे तैयार कर लटकायें जाते थे। ये दतिया की विशिष्ट् परम्पराएँ थीं। मैं प्रत्यक्ष देखा है कि मेवे के माले तैयार कर लटकाने की प्रथा बुंदेलखंड की मामुलिया में भी पायी जाती है। ये झाँकियाँ बेलबूटों के अलंकरण के अन्दर बनाई जाती थी। बेलबूटों की लटों को एक के ऊपर एक करके बड़ी सफाई से बनाया जाता था। बेलबूटों की अस्सी–अस्सी लटें एक दूसरे पर चढ़ाकर अद्भुत कलात्मक दष्ष्य प्रस्तुत किया जाता था।

द्वादशी से लेकर अश्विन् शुक्ल प्रतिपदा (नवरात्रि का प्रथम दिन) तक पाँच दिन की अवधि में साँझी–उलछारने का एक क्रम निश्चित है। राम या कृष्ण सम्प्रदाय के अनुसार इन पाँच तिथियों में रामायण या श्रीमद्भागवत की प्रमुख लीलायें उलछारी जाती हैं। किन्तु अन्तिम तिथि प्रतिपदा के दिन वेदिका पर कला वृच्छ (कामधेनु और कल्पवृक्ष) की आकृति उलछारी जाती है।[9] वैसे तो दतिया के सभी मंदिरों में श्रीकृष्ण की लीलाएँ अंकित की जाती, परन्तु दतिया के अवधबिहारी मंदिर में राम की झाँकियाँ सजायी जाती थी। ये सब झाँकियाँ सूखे रंगों से कागजी साँचों के बीच रंग भरकर तैयार की जाती थी।

अतः कोई भी कला प्रस्तुति व प्रशंसा के बिना जिंदा नहीं रह सकती। इसलिये मध्यप्रदेश की लोककला साँझी को भी इसकी आवश्यकता है। जब तक इस कला को सामूहिक रूप से उत्थान नहीं मिलता, खतरा है कि कहीं इस मशीनी युग में एक फैशन बन कर ही यह कला न रह जाये। साँझी कला को भारत के कोने–कोने में फैलाने का प्रयास निश्चित ही आज की बहुत बड़ी आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ

[1] *चितरावन, डॉ॰ भगवतीलाल राजपुरोहित, 2006, पृ0 170*

[2] *बघेली संस्कृति और साहित्य, गोमती प्रसाद विकल, 1999 पृ0 78*

[3] *चौमासा अंक–33, मांगीलाल सोलंकी, पृ0 54*

[4] *मालवा की लोककला, पष्0 8 (जिरोती, वसंत निरगुणे, 2006, पृ0 89)*

[6] *मालवा की लोक चित्रकला, ईशनारायण जोशी, 1983, पृ 10*

[7] *दतिया उद्भव और विकास, 1986, पृ0 106–107*

[8] *समकालीन कला पत्रिका, एस॰एस॰हितकारी, पृ0 17*

[9] *सुराँती, महेश कुमार मिश्र' मधुकर', 2006, पृ0 71*

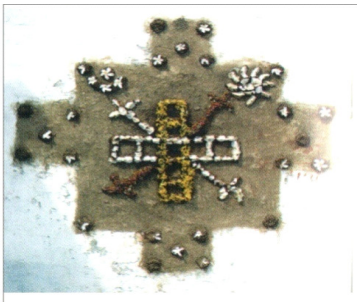

चौपड़, साँझी, लोक भित्तिचित्र,
मालवा, म.प्र.

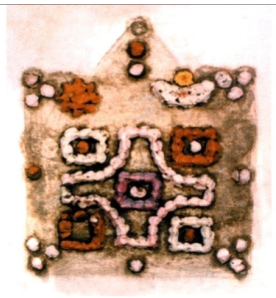

पूनम पाटला, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

पड़वा का पंखा, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

बीज को बाजोट, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

तीज का घेवर, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

चौथ का चौपड़, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

पंचम का पाँच (कुँवारा-कुँवारी), साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

छठ की छावड़ी, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

सातम का सात्या, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

आठम का आठ, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

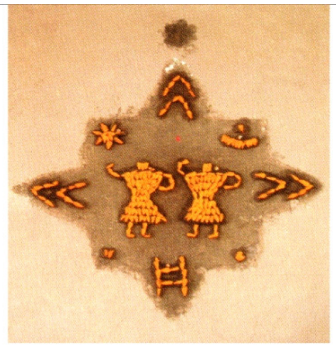

नवमी का डोकरा-डोकरी, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

दसवीं का दीवा, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

ग्यारस का केल पेड़, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

बारस का खूजर पेड, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

तेरस का किलाकोट, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

चौरस का किलाकोट, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

अमावस का पूर्ण किलाकोट, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.

सोरस का किलाकोट, साँझी,
लोक भित्तिचित्र, मालवा, म.प्र.